प्रसाद के नाटकों में नारी–पात्रों का चरित्र विश्लेषण

* पूनम सिंह

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी नाटक को एवं नाट्य कला को जन्म दिया। भारतेन्दु के अनुसार "नाटक शब्द का अर्थ है नट लोगों की क्रिया।"[1] प्रसाद ने नाटक को एक नयी दिशा दी विषय और शैली की दृष्टि से उसे चरमोत्कर्ष पर पहुँचाया। समय की आवश्यकता पहचानकर जब वे उत्साह से निरन्तर नाटक लिख रहे थे, तब लोग उनके नाटकों की मंचन–क्षमता पर उतने ही प्रश्नचिन्ह लगा रहे थे। प्रसाद ने इन प्रश्नों का कोई व्यक्तिगत उत्तर नहीं दिया, बल्कि इस विषय पर व्यापक और तटस्थ लेख लिखा– **'रंगमंच'**। जिसमे उन्होंने कहा कि "रंगमंच के सम्बन्ध में यह भारी भ्रम है कि नाटक रंगमंच के लिए लिखे जाएँ। प्रयत्न यह होना चाहिए कि नाटक के लिए रंगमंच हो, जो व्यवहारिक है।"[2] प्रसाद ने पूरे हिन्दी साहित्य में जागरण की, सांस्कृतिक चेतना की, राष्ट्रीय भावना की, करूणा और प्रेम की, उदात्त मानवीय भावों और आदर्शों की लहर सी दौड़ा दी। जयशंकर प्रसाद ने साहित्य की समस्त विधाओं की रचना की परन्तु नाटककार के रूप में उनका स्थान अतुलनीय है। **'एक घूँट'** तथा **'कामना'** को छोड़कर उनके समस्त नाटक ऐतिहासिक एवं पौराणिक हैं। **'राज्यश्री'**, **'चन्द्रगुप्त'**, **'स्कन्दगुप्त'** **'अजातशत्रु'** एवं **'ध्रुवस्वामिनी'** प्रसाद जी के शुद्ध ऐतिहासिक नाटक हैं। **'विशाख'** जहाँ अर्थ ऐतिहासिक नाटक है वहीं **'कामना'** और **'एक घूँट'** प्रतीकात्मक नाटक हैं। प्रसाद के नाटक हिन्दी नाट्य साहित्य में एक नया अध्याय खोलते हैं।

प्रसाद के विभिन्न नाटकों में नारी पात्रों को अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। ऐसा मान लिया गया है कि छायावाद–काल में नारी–स्वरूप का जैसा सही और सुन्दर मूल्यांकन किया गया, वैसा कभी नहीं हुआ। प्रसाद छायावाद के अग्रणी थे और उन्होंने **'कामायनी'** में तो नारी की गरिमा का विशेष रूप से वर्णन किया ही था, अपने नाटकों मे भी उन्होंने नारी के अनेक उच्च गुणों को दर्शाया है, जिससे नारी समाज का मस्तक ऊँचा हुआ है, उन्होंने न केवल नारी के शारीरिक सौन्दर्य का वर्णन किया है, अपितु उन्हें करूणा, दया, क्षमा, ममता, सरलता, निष्कपटता आदि सात्विक गुणों की अक्षयनिधि के रूप में उपस्थित किया है। इसके साथ ही, नारी की संगठन एवं शासन करने की क्षमता भी प्रदर्शित की गयी है फिर, उन्होंने अपने नाटकों में उन नारियों के चरित्र पर भी प्रकाश डाला है, जिनमें असद् प्रवृत्तियाँ, स्वार्थ, ईर्ष्या, धृणा, प्रतिहिंसा की भावना विद्यमान रहती है। प्रसाद के नाटकों में कुछ प्रमुख नारी पात्रों का चरित्र विश्लेषण इस प्रकार है –

राज्यश्री :

राज्यश्री, नाटक **'राज्यश्री'** की मुख्य पात्र है। वह कन्नौजराज ग्रहवर्मा की रानी है। वह पतिपरायण, स्नेहमयी एवं विचारशील पत्नी है। अपने पति ग्रहवर्मा को भावी आशंका से व्यग्र देख राज्यश्री उन्हें धैर्य बँधाती है और उनके आत्मबल को जगाने की कोशिश करती है। यही नहीं, आखेट क्षेत्र में उनके चले जाने पर राज्यश्री प्रतिक्षण उनका समाचार पाने को व्याकुल रहती है। पति की मृत्यु उसे विक्षिप्त बना

* शोधछात्रा, डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय, लखनऊ

देती है। राज्यश्री दानशीला नारी है। वह नित्य देव–मन्दिर में भिक्षुओं को वस्त्र और धन वितरण करती है। वह स्वयं शीलवती है और दूसरों से भी यही अपेक्षा करती है कि वे शील की रक्षा करें। उसके सौन्दर्य पर मुग्ध भिक्षु शांतिदेव को दान पर्व में राज्यश्री दान करते वक्त उससे कहती है– "तुम संयत करो अपने मन को भिक्षु! श्लाघा और आकांक्षा का पथ तुम बहुत पहले छोड़ चुके हो। यदि तुम्हारी कोई अत्यंत आवश्यकता हो, तो मैं पूरी कर सकती हूँ; निश्चिन्त उपासना की व्यवस्था कर दे सकती हूँ।"[3] कोमल हृदया होते हुए भी युद्ध का समाचार उसे विचलित नहीं करता। क्षत्राणी होने के कारण इसे एक शुभ समाचार मानती है तथा युद्ध की तैयारी के लिए सैनिकों को आदेश देती है। वह अपनी वीरता तब प्रदर्शित करती है जब दुर्ग पर घुसे शत्रु–पक्ष देवगुप्त पर निर्भयता से तलवार चलाती है। अपने कुल की मर्यादा का बोध उसमें विद्यमान है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि राज्यश्री पतिपरायण, कोमल हृदया, दानशीला, तथा निर्भीक नारी है। वह करूणा की प्रतिमूर्ति है, जिसके चरित्र में आकर पथ भ्रष्ट चरित्र भी पावन बन जाता है।

चंद्रलेखा :

चंद्रलेखा, नाटक **'विशाख'** की मुख्यनारी पात्र है। वह सुश्रवा नाग की अनिन्द्य सुन्दरी कन्या है। उसके सौन्दर्य से तक्षशिला के सद्य–स्नातक विशाख मुग्ध हो जाता है। चंद्रलेखा में कष्ट सहने की अपूर्व क्षमता है। अपने पिता को बौद्ध महन्त के चंगुल से छुड़ाने के लिए वह अपने आप को चरित्रहीन लोगों के सामने समर्पित कर देती है। अपने बूढ़े बाप को बंदी देख वह कहती है– "क्षमा करो। मुझे मार लो। मेरे बूढ़े पिता को छोड़ दो।"[4] इससे पिता के प्रति चंद्रलेखा की ममता एवं कर्तव्य का पता चलता है। निर्भीकता उसके चरित्र की बड़ी विशेषता है। चरित्रहीन एवं अत्याचारी बौद्धभिक्षुओं द्वारा चंद्रलेखा को एक कोठरी में बंदी बनाएँ जाने पर भी उनसे डरती नहीं अपितु पिता के प्रति अपना कर्तव्य स्मरण रखती है। चंद्रलेखा में भी प्रेम की शीतलता विद्यमान है। यों तो वह विशाख की सज्जनता पर मुग्ध है परन्तु पिता के प्रति कर्तव्य का स्मरण कर वह अपने प्रणय को दबाकर रखना चाहती है। वह विशाख से कहती है– "मुझे तुम अपने बूढ़े बाप की गोद से छीन लेना चाहते हो। यह बड़ी भयानक बात है।"[5] वह अतिथि–सत्कार का भी पूर्ण रूप से पालन करती है। जब कश्मीर का राजा नरदेव उसकी कुटिया में पहुँचता है तो वह बड़े उत्साह के साथ राजा का स्वागत करती है। अतः कहा जा सकता है कि 'चंद्रलेखा' एक निर्भीक, शील, दृढ़, एकनिष्ठ एवं कर्तव्यपरायण नारी है।

वासवी :

वासवी, नाटक **'अजातशत्रु'** की मुख्य नारी पात्रों में से एक है। वह मगध सम्राट बिम्बिसार की बड़ी रानी है। वह अत्यंत शील, धीर, कोमल, उदार स्वभाव की है। वह कठिन से कठिन परिस्थितियों में अपने पति बिम्बिसार के साथ जीवन निर्वाह करती है। इससे उसकी पति भक्ति स्पष्ट परिलक्षित होती है। वह कल्याणमयी नारी है। उसके स्वभाव में कोमलता प्रदर्शित होती है। उसकी सपत्नी छलना उसे पग–पग पर व्यंग्य प्रहार द्वारा अपमानित करती है तथा उस पर मिथ्या कलंक लगाती है। इसके बावजूद भी वासवी छलना पर क्रोधित नहीं होती, और न ही उसे कटुवचन सुनाती है अपितु उसे शांतभाव से समझाते हुए कहती है– "बहिन। जाओ, सिंहासन

पर बैठकर राज्यकार्य देखो। व्यर्थ झगड़ने से तुम्हें क्या सुख मिलेगा?"[6] वह अपने पति बिम्बिसार की इच्छापूर्ति के लिए अपना रत्नजड़ित स्वर्ण–कंगन सहर्ष भिक्षुओं को दान कर देती है। वह कहती है– "प्रभु। स्वर्ण और रत्नों का आँखों पर बड़ा रंग रहता है, जिससे मुनष्य अपना अस्थि–चर्म का शरीर नहीं देखने पाता।"[7] उदारता, कोमलता, सहिष्णुता आदि मानव के सहज धर्म है। इन गुणों के सामने अहंकार तथा द्वेष जैसी पाशव वृत्तियाँ सदैव से पराजित हुई है। वासवी के इन स्वाभाविक गुणों के समक्ष पशुवत आचरण करने वाली छलना को भी घुटने टेकने पड़ते हैं।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि वासवी पतिपरायण, त्यागशील, स्नेहमयी, परहितकारी, क्षमामयी नारी है। जिसके समस्त गुणों के सामने पाशववृत्तियाँ भी नष्ट हो जाती हैं।

पद्मावती :

पद्मावती, मगघ राजकुमारी उदयन की रानी है। वह सरल, स्नेहमयी, पतिव्रता नारी है। वह मगध परिवार की आदर्श बालिका है। पितृ परिवार में वह भाई अजातशत्रु की मंगलकामना से प्रेरित होकर उसे सन्मार्ग का निर्देश देती है। वह कहती है– "यह मेरा कर्तव्य है कि तुमको अभिशापों से बचाऊँ और अच्छी बातें सिखाऊँ।"[8] अपने भाई द्वारा उसकी अवहेलना किए जाने पर भी वह उसके प्रति स्नेह रखती है। पद्मावती के चरित्र में सहिष्णुता और गंभीरता झलकती है। जब अजातशत्रु उसकी अवहेलना करता है और छलना भी उस पर गृह–विद्रोह की आग लगाने का अभियोग लगाती है तो पद्मावती इसका प्रतिकार न कर स्वयं पितृग्रह को त्याग कर अपने पति के पास चली जाती है। उसके हृदय में प्रतिहिंसा की भावना लेश मात्र भी नहीं है। पति–गृह में भी उस पर मिथ्याकलंक लगाया जाता है। उदयन उस पर अकारण संदेह भी करता है परन्तु पतिव्रता स्त्री होने के कारण वह स्वामी की प्रत्येक इच्छा के आगे सविनय मस्तक झुका देती है। वह कहती है– "मैं कौशाम्बी–नरेश की राजभक्त प्रजा हूँ। स्वामी, किसी छलना का आपके मन पर अधिकार हो गया है। वह कलंक मेरे सिर पर ही सही, विचारक दृष्टि से यदि मैं अपराधिनी हूँ, तो दण्ड भी मुझे स्वीकार है और वह दण्ड, वह शांतिदायक दण्ड यदि स्वामी के कर–कमलों से मिले, तो मेरा सौभाग्य है। प्रभु ! पाप का सब दण्ड ग्रहण कर लेने से वही पुण्य हो जाता है।"[9]

अतः कहा जा सकता है कि प्रसाद जी ने उसके चरित्र में विनम्रता, सहिष्णुता, कोमलता, पतिपरायणता आदि प्रदर्शित कर उसके व्यक्तित्व को उज्जवल बनाया है।

कामना :

कामना, नाटक 'कामना' की मुख्य नारी पात्र है। अपने द्वीप की उपासना का नेतृत्व कामना स्वयं करती है। उसके स्वावलम्बी रूप का परिचय इस पंक्ति में मिलता है– "मैं ही इस द्वीप–भर की उपासना का नेतृत्व कर रही हूँ। मेरे लिए कुछ विशेष स्वतंत्रता है।"[10] अपना जीवनसाथी स्वयं चुनने में भी कामन स्वतंत्र है। वह अपनी सखी लीला से अपने प्रेमी संतोष के बारे में कहती है– "वह मेरा निर्वाचित है। मैं चाहे ब्याह करूँ या नहीं, वह तो सुरक्षित रहेगा, समझी लीला।"[11] कामना निर्णय लेने में पूर्ण स्वतंत्र है। कामना सरल प्रकृति है। उसे दूसरों को ठगना नहीं आता। यही कारण है कि वह विलास के कुप्रभाव में आ जाती है। उसकी चंचलता ही उसे

संतोष से हटाकर विलास के पास पहुँचाती है परन्तु जब उसे विलास के असली रूप का पता चलता है, तो वह पुनः संतोष के समीप आ जाती है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि प्रसाद ने उसे आधुनिक विचार रखनेवाली स्त्री के रूप में चित्रित किया है।

देवकी :

देवकी, नाटक **'स्कन्दगुप्त'** की मुख्य नारी पात्रों में से एक है। वह मगध सम्राट कुमारगुप्त की बड़ी रानी तथा स्कंदगुप्त की माता है। वह उदार, धर्म–पराण, सत्यनिष्ठ निर्भीक और कोमल हृदयवाली है। वह दुख–सुख दोनों में ही अपनी प्रार्थना भगवान के चरणों में ही भेजती है। इससे उसके धार्मिक मनोवृत्ति का परिचय मिलता है। छोटी रानी अनंतदेवी और भटार्क जो उसके प्राण लेने का षडयंत्र रचते हैं, उनकी दर्पमय उक्तियों से वह विचलित नहीं होती। अनंतदेवी के पूछने पर कि– "क्यों देवकी। राजसिंहासन लेने की स्पर्धा क्या हुई?"[12] वह उसको निर्भीकतापूर्वक उत्तर देती है– "परमात्मा की कृपा है कि मैं स्वामी के रक्त से कलुषित सिंहासन पर न बैठ सकी।"[13] उसकी निर्भयता का परिचय उस समय भी मिलता है जब रामा देवकी के स्थान पर स्वयं आत्मबलि देने को प्रस्तुत होती है और देवकी उसका विरोध करते हुए आततायियों के हाथों स्वयं मरने को प्रस्तुत हो जाती है। वह रामा से कहती है– "शांत हो रामा ! देवकी अपने रक्त के बदले और किसी का रक्त नहीं गिराना चाहती। चल रे रक्त के प्यासे कुत्ते! चल, अपना काम कर।"[14]

अपराधियों को क्षमा करना उसके चरित्र की बड़ी विशेषता है। उसकी हत्या का षडयंत्र रचने वाले शर्वनाग और भटार्क को वह स्वयं क्षमा तो करती है साथ ही साथ स्कंदगुप्त से शासनदण्ड क्षमा के संकेत पर चलाने की कामना करती है।

वनलता :

वनलता, नाटक **'एक घूँट'** की मुख्य नारी पात्र है। वह कवि रसाल की स्त्री है। वह अपने पति की भावुकता से असन्तुष्ट है। वह स्वगत कहती है– "मेरी विश्व–यात्रा के संगी मेरे स्वामी ! तुम काल्पनिक विचारों के आनन्द में सच्ची संगिनी को भूल.....।"[15] पति की समस्त भावनाओं को वह अपनी ओर आकर्षित करने में व्यस्त रहती है। उसका चरित्र अत्यंत पावन एवं उज्जवल है। पति के प्रति उसका प्रेम एकनिष्ठ है। वह अपने पति रसाल के प्रेम के अभाव से दुखी है। उसे दुखी पाकर स्वतंत्र प्रेम का उपासक 'आनंन्द' जब उससे प्रेम करने का प्रस्ताव रखता है तो वनलता कहती है– "मैं जिसे प्यार करती हूँ वही केवल वही व्यक्ति – मुझे प्यार करें, मेरे हृदय को प्यार करें, मेरे शरीर को –जो मेरे सुंन्दर हृदय का आवरण है– सतृष्ण देखे। उस प्यास में तृप्ति न हो, एक–एक घूँट वह पीता चले, मैं भी पिया करूँ। समझे? इसमें आपकी पोली दार्शनिकता या व्यर्थ के वाक्यों को स्थान नहीं"[16] अंततः आनन्द भी स्वच्छंद प्रेम को खोखला पाकर वनलता के विचारों की महत्ता को स्वीकार करता है।

अतः कहा जा सकता है कि प्रसाद ने वनलता के माध्यम से स्त्री–जीवन के महत्व को स्वीकारा है, एवं हृदय के साथ मस्तिष्क का मेल कराने का श्रेय उन्हीं को दिया है।

अलका :

तक्षशिला की राजकुमारी अलका, नाटक **'चन्द्रगुप्त'** की मुख्य नारी पात्र है। उसका चरित्र निःस्वार्थ राष्ट्रभक्ति, कर्तव्य पालन, सेवामूलक भावना एवं वीरता से ओतप्रोत है। वह चन्द्रगुप्त, सिंहरन तथा चाणक्य से प्रभावित होकर देश सेवा के लिए प्रेरित होती है। वह देश के विरूद्ध जाने वाले अपने भाई आम्भीक को रोकती है। पिता और भाई को अपना विरोधी पाकर गृह भी त्यागती है। यहीं उसकी निःस्वार्थ देश भक्ति सिद्ध होती है। उसका भाई यवनों की सहायतार्थ उद्भाण्ड में सिंधु पर सेतु बनाता है। अलका मालविका से उसका मानचित्र बनवाकर सिंहरन को देती है। वह अपनी साहस और निर्भीकता का परिचय तब देती है जब यवन सैनिक मालविका से मानचित्र लेने के लिए अलका पर हमला करता है। अलका कहती है– ''परन्तु यह तुम्हें नहीं मिल सकता। यदि तुम सीधे यहाँ न टलोगे तो शांति–रक्षकों को बुलाऊँगी।''[17] अलका मालव–दुर्ग की रक्षा का भार स्वयं लेकर अपनी कर्तव्यमूलक भावना का परिचय देती है। अलका दूसरों की प्रेरणाशक्ति है। वह लोगों में देशभक्ति–मूलक उत्साह पैदा करने के लिए आर्य पताका लेकर देश भक्ति गीत गाती है जिससे कि उनमें राष्ट्र भावना का प्रसार हो सके। आम्भीक भी उसके स्वदेशनुरागपूर्ण व्यक्तित्व से प्रभावित होकर अपने पूर्व कार्यों के लिए लज्जित होता है। चाणक्य उसके स्वदेश हित, त्याग और कष्ट के लिए उसकी प्रशंसा करता हुआ आम्भीक से कहता है– ''मेरी लक्ष्मी अलका ने आर्य गौरव के लिए क्या–क्या कष्ट नहीं उठाए।''[18] अलका में वाकचातुरी एवं व्यवहार बुद्धि यथेष्ट परिमाण में है। वह वन प्रदेश में सिल्यूकस को चकमा देकर उसके चंगुल से निकलती है, पर्वतेश्वर को भुलावे में डालकर सिंहरन को छुड़ाती है एवं स्वयं निकल भागती है। यह उसकी कार्य कुशलता का ही परिचय है।

अतः कहा जा सकता है कि अलका में अगाध राष्ट्र भक्ति होने के कारण वह प्रसाद की काल्पनिक पात्र होकर भी नाटक की श्रेष्ठ पात्र सिद्ध होती है।

सुवासिनी :

सुवासिनी, मगध के मंत्री शकटार की कन्या है। वह मगध सम्राट नंद के रंगशाला की नर्तकी है। मगध का अमात्य राक्षस के प्रति उसका प्रणय अविचल है। वह राक्षस को हृदय से चाहती है। किसी प्रकार का प्रलोभन उसे अपने मार्ग से अलग नहीं करता। जब मगध सग्राट नंद सुवासिनी से अपना प्रणय निवेदन करता है तो वह कती है– ''महाराज ! मैं अमात्य राक्षस की धरोहर हूँ, सम्राट की भोग्या नहीं बन सकती।''[19] उसके चरित्र में प्रेम की एकनिष्ठता का ही परिचय मिलता है। सच्ची प्रणयिनी से हटकर भी उसका दूसरा रूप है, वह है– आदर्श का रूप। वह पिता की अनुमति के बिना अपने प्रणय को दबाकर रखना चाहती है। वह नहीं चाहती कि उसके चिर–दुखी पिता को उसके स्वेच्छापूर्ण आचरण से कष्ट पहुँचे। इसी कर्तव्य को ध्यान में रखकर वह राक्षस से कहती है– ''मैं तुम्हारा प्रणय अस्वीकार नहीं करती। किन्तु अब इसका प्रस्ताव पिता जी से करो।''[20] अंततः चाणक्य ही सुवासिनी को राक्षस के साथ परिणय की अनुमति देकर उस समस्या का हल कर देता है।

अतः कहा जा सकता है कि वह एक शील, दृढ़, कर्तव्यनिष्ठ नारी है। वह स्वयं हारकर भी अपने व्यक्तित्व को कहीं नहीं खोती।

कल्याणी :

कल्याणी, मगध राजकुमार नंद की कन्या है। उसमें वीरता, साहस और आत्मसम्मान की भावना प्रबल है। वह नंद के विलासपूर्ण राजमहलों में पली है परन्तु कुत्सित विलास की छाया उसके व्यक्तित्व को छू तक नहीं पायी। वह नारी है परन्तु उसमें नारी भीरूता के स्थान पर असीम साहस एवं वीरता विद्यमान है। वासना से उद्दीप्त पर्वतेश्वर जब उसे पकड़ता है तो कल्याणी उसी का छूरा निकालकर उसका वध करती है।

उसमें आत्म सम्मान की भावना प्रबल है। पर्वतेश्वर द्वारा उससे विवाह सम्बन्ध अस्वीकार किए जाने पर उसके स्वाभिमान पर ठेस पहुँचता है। पर्वतेश्वर से अपमान का बदला लेने तथा उसे नीचा दिखाने के लिए वह युद्ध भूमि पर पुरूष वेश धारण करके गुल्म सेना लेकर उसके सहयतार्थ पहुँचती है। युद्ध से थके हुए पर्वतेश्वर जब अपनी विवशता स्वीकार करता है तब कल्याणी उसके गौरव को नष्ट करते हुए कहती है– ''इन थोड़े से अर्धजीवी यवनों को विचलित करने के लिए पर्याप्त मगध सेना है। महाराज आज्ञा दीजिए।''[21] कल्याणी बाल सहचर चन्द्रगुप्त की योग्यता तथा वीरता से प्रभावित होती है परन्तु वह प्रेम का प्रत्युत्तर प्रेम के रूप में चन्द्रगुप्त से नहीं पाती। चन्द्रगुप्त के प्रति प्रेम की अनन्यता होते हुए भी पितृ–भक्ति की भावना के कारण वह अपने प्रणय पीड़ा को दबा देती है। वह चन्द्रगुप्त से कहती है– ''तुम मेरे पिता विरोधी हुए, इसलिए उस प्रणय को प्रेम पीड़ा को मैं पैरों से कुचल कर दबाकर खड़ी रही। अब मेरे लिए कुछ भी अवशिष्ट नहीं रहा। पिता ! लो मैं भी आती हूँ।''[22] इस प्रकार वह चन्द्रगुप्त को नंद का विरोधी पाकर स्वयं आत्महत्या कर लेती है।

अतः कहा जा सकता है कि कल्याणी एक कर्तव्यशीला, आत्मभिमानी एवं स्वावलम्बी नारी है। उसका चरित्र द्वन्द्व एवं दुख से परिपूर्ण है। साहस के साथ परिस्थितियों का सामना करना उसके चरित्र की विशेषता है।

मालविका :

मालविका, सिंधु देश की कुमारी है परन्तु तक्षशिला की राजकुमार अलका से उसका इतना स्नेह बढ़ जाता है कि वह यहीं रहने लगती है। सरलता एवं सेवाभाव उसके चरित्र की विशेषता है। वह अलका को उद्भाण्ड सेतु का मानचित्र देकर अपनी सहानुभूति प्रकट करती है। मालव के युद्ध में भी घायलों की सेवा का कार्य अपने हाथ लेती है। वह शस्त्र बल से नहीं आत्मबल से सेवा व्रत धर्म पालन करती है। वह अलका से कहती है– ''मैं डरती हूँ, घृणा करती हूँ। रक्त की प्यासी छूरी अलग करो, अलका मैंने सेवा का व्रत लिया है।''[23] वह चन्द्रगुप्त की वीरता पर आकर्षित होती है परन्तु चन्द्रगुप्त के प्रति उसकी निःस्वार्थ प्रेम भावना है। जब चाणक्य उस पर चन्द्रगुप्त के प्राणों की रक्षा का भार सौंप देता है तब वह अपने प्राणों को न्यौछावर करके उसकी रक्षा करती है। इस प्रकार प्रेम की वेदी में आत्म बलिदान दिलवाकर प्रसाद मालविका के चरित्र को गौरवमयी बना देते हैं।

अतः कहा जा सकता है कि वह प्रणय के लिए सर्वस्व बलिदान करने वाली भावुक स्त्री है जिसका अंत प्रसाद ने अति करूणापूर्ण ढंग से दिखाया है।

कार्नेलिया :

कार्नेलिया सिल्यूकस की पुत्री है। कार्नेलिया **'चन्द्रगुप्त'** एवं **'कल्याणी परिणय'** दोनों नाटकों की ही नारी पात्र है। एक विदेशी कन्या होते हुए भी कार्नेलिया

का भारतीय संस्कृति से अगाध प्रेम है। वह कहती है– "वही भारतवर्ष ! वही निर्मल ज्योति देश, पवित्र भूमि, अब हत्या और लूट से वीभत्स बनायी जायेगी। ग्रीक सैनिक इस शस्यश्यामल पृथ्वी को रक्त रंजित बनावेंगे। पिता अपने–अपने साम्राज्य से प्राणियों का नाश होगा।"[24] कार्नेलिया को युद्ध विग्रह नपसंद है। इससे उसके चरित्र की कोमलता और सहृदयता का ही पता चलता है। यही नहीं, भारतीय संगीत एवं दर्शन में भी उसकी गहरी अभिरूचि है। वह चन्द्रगुप्त के तेजस्वी स्वरूप से तो आकर्षित है ही, यवन–शिविर में रहते हुए जब वह फिलिप्स से उसकी मान रक्षा करता है तो उसके हृदय पर कृतज्ञता का भी बोझ पड़ जाता है। कार्नेलिया के चरित्र में सहज उदारता दिखाई पड़ती है। उसकी वीरता का परिचय हमें उस समय मिलता है जब भारतीय सैनिक सिल्यूकस को पराजित कर यवन शिविर में प्रवेश करते हैं वह कहती है– "चिंता नहीं, ग्रीक बालिका भी प्राण देना जानती है। ग्रीक का आत्म सम्मान जिये।"[25] इस प्रकार छूरी निकालकर आत्महत्या के लिए वह सन्नद्ध होती है।

उसके चरित्र से स्पष्ट हो जाता है कि जहाँ उसमें नारीगत सरलता, कोमलता, सहृदयता, सहानुभूति, भावुकता, आत्मगौरव आदि गुण हैं, वहीं दृढ़ता और वीरता भी विद्यमान हैं।

ध्रुवस्वामिनी :

ध्रुवस्वामिनी, नाटक **'ध्रुवस्वामिनी'** की सशक्त नारी पात्र है। वह गुप्त कुल के राजा रामगुप्त की रानी है। महादेवी होते हुए भी गुप्त कुल में वह बंदिनी जीवन व्यतीत करती है। उसका पति रामगुप्त साम्राज्य संभालने में अयोग्य सिद्ध होता है। रामगुप्त दिन–रात मद्यपान में ही डूबा रहता है और नपुंसक की भाँति अपना जीवन व्यतीत करता है। ध्रुवस्वामिनी वहाँ पग–पग पर अपमानित एवं लांछित जीवन बिताती है। रामगुप्त उसे उपहार की वस्तु मानकर संधि स्वरूप शकराज के पास भेजने का निश्चय करता है जिसे सुनकर ध्रुवस्वामिनी उससे अपने गौरव की रक्षा की माँग करती है परन्तु रामगुप्त उसे कहता है– "जाओ, तुमको जाना पड़ेगा। तुम उपहार की वस्तु हो। आज मैं तुम्हें किसी दूसरे को देना चाहता हूँ, इसमें तुम्हें क्यों आपत्ति हों?"[26]

उसका नारीगत कोमल हृदय कठोर होकर अपनी रक्षा का भार स्वयं उठा लेने में समर्थ हो जाता है। यदि एक ओर उसमें पुरूष जाति की स्वार्थ प्रेरित क्रूरताओं को सहन करने की अपूर्व क्षमता है तो दूसरी ओर आत्मगौरव अक्षुण्ण रखने के लिए वह प्रखर बुद्धि–वैभव, निर्भीकता आदि गुणों से भी पूर्ण है। आत्मगौरव की भावना से प्रदीप्त ध्रुवस्वामिनी सतीत्व की रक्षा हेतु शकराज का सामना करने के लिए शक–शिविर में जाती है। उसका प्रेमी चन्द्रगुप्त भी उसके साथ जाता है। इस प्रकार वह क्षत्राणी की भाँति मृत्यु की विभीषिका से किंचित मात्र भी भयभीत न होकर अपनी कुशाग्र बुद्धि द्वारा शकराज का अंत करती है। अंत में अपने उत्कर्ष चरित्र द्वारा गुप्त कुल के सामंत तथा परिषदगणों को वह अपने अनुकूल बनाने में भी सफल होती है। वह अपने अधिकार की माँग रामगुप्त से न कर अपने योग्य पति के रूप में चन्द्रगुप्त को पाती है।

अतः प्रसाद ने ध्रुवस्वामिनी के चरित्र से यह दिखाने की कोशिश की है कि किस प्रकार नारी अबला होकर भी अपने अधिकार को अपने आत्मबल, निर्भीकता तथा बुद्धि कौशल द्वारा प्राप्त करने में सफल होती है।

कोमा :

कोमा, आचार्य मिहिरदेव की पालिता पुत्री तथा शकराज की रानी है। वह प्रणय भावुकता और कोमलता की सजीव मूर्ति है। वह भूल से कठोर शकराज से प्रेम कर बैठती है। प्रणय के लिए सर्वस्व दान करने का उत्साह ही उसके जीवन का आदर्श है। शकराज उसके साथ अनुचित व्यवहार करता है परन्तु फिर भी वह शकराज के अन्याय को चुपचाप सहन करती है। कोमा सरल प्रकृति की नारी है। उसकी सरलता का लाभ उठाकर शकराज उसके साथ मिथ्या प्रेम का अभिनय करता है और ध्रुवस्वामिनी को बूलवाने का अर्थ राजनीतिक प्रतिशोध बताता है। उसका हृदय प्रेम, दया और सहानुभूति से ओतप्रोत है। एक तरफ पिता का प्रेम और दूसरी तरफ प्रेमी का स्नेह। वह दोनों के अंतर्द्वन्द में पड़ी रहती है। वह शकराज से प्रताड़ित होने पर भी उसका विद्रोह नहीं करती। वह शकराज के प्रेम में विह्वल है इसलिए प्राण बंधन को तोड़ना भी उसे रूचिकर नहीं प्रतीत होता है।

वह इतनी भावुक है कि इस प्रकार शकराज को छोड़ जाना वह उचित नहीं समझती परन्तु शकराज के स्वार्थमयी कलुष मूर्ति को देखकर वह अपने पिता का अनुगमन करती है। उसे छोड़कर जाते समय शकराज पुनः कोमा को प्यार की याद दिलाता है पर वह उसे ठुकरा देती है। शकराज से दूर जाकर भी उसकी प्रणय–भावना समाप्त नहीं होती। प्रेम के स्थान पर शकराज से उसे केवल निराशा एवं पीड़ा ही प्राप्त होती है, परन्तु फिर भी वह शकराज का शव माँगने ध्रुवस्वामिनी के पास पहुँचती है। वह ध्रुवस्वामिनी से कहती है– ''रानीं, तुम भी स्त्री हो। क्या स्त्री की व्यथा न समझोगी? आज तुम्हारी विजय का अंधकार तुम्हे शाश्वत स्त्रीत्व को ढक लें, किन्तु सबके जीवन में एक बार प्रेम की दीपावली जली है। जली होगी अवश्य, तुम्हारे भी जीवन में वह आलोक महोत्सव आया होगा, जिससे हृदय–हृदय को पहचानने का प्रयत्न करता है, उदार बनता है और सर्वस्व बात करने का उत्साह रखता है।''[27]

इस प्रकार हम देखते हैं कि कोमा रूढ़ियों से जकड़ी हुई है। वह आत्मसमर्पण, दैन्य तथा त्याग के सहारे अपने प्रेम का अंत तक निर्वाह करती है। उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि कोमा ध्रुवस्वामिनी की तरह ही प्रेम विदग्धा है परन्तु एक उस प्रताड़ित अपमान के विरूद्ध विद्रोह करती है और दूसरी उसके साथ चिपटी रहती है।

जयशंकर प्रसाद ने भारतीय शास्त्रीय एवं सांस्कृतिक परम्पराओं को आत्मसात् करते हुए समूचे राष्ट्रीय संघर्ष, उच्चतर मानवीय मूल्यों, चरित्र और मानवीय द्वन्द्व की चेतना को नवीन सौन्दर्य बोध से नाटक में समृद्ध किया। भारतीय क्लासिक तत्व उनके नाटक **'स्कन्दगुप्त'**, **'चन्द्रगुप्त'**, **'ध्रुवस्वामिनी'** को कालिदास और शेक्सपीयर के नाटकों की तरह कालजयी बनाते है। प्रसाद के नाट्क साहित्य में नारियों का जितना प्रखर चारित्रिक विश्लेषण मिलता है उतना अन्य किसी कवि के नाट्य साहित्य में नहीं मिलता। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि प्रसाद ने नारी पात्रों में सत् एवं असत् दोनों प्रकार के चरित्रों का सफल चित्रण किया है परन्तु

उनका झुकाव सत् पात्रों की ओर ही रहा इसीलिए उन्होंने विकृत पात्रों में सत्वृत्तियों की स्थापना कर उनके चरित्र को उज्जवल बनाने का प्रयास किया है।

सन्दर्भ

1. भारतेन्दु–नाटकावली, भाग–2, पृष्ठ 421
2. जयशंकर प्रसाद की प्रासंगिकता, प्रभाकर श्रोत्रिय, पृष्ठ 19
3. जयशंकर प्रसाद के सम्पूर्ण नाटक एवं एकांकी, जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 118
4. वही, पृष्ठ 158
5. वही, पृष्ठ 170
6. वही, पृष्ठ 251
7. वही, पृष्ठ 221
8. वही, पृष्ठ 211
9. वही, पृष्ठ 233
10. वही, पृष्ठ 373
11. वही, पृष्ठ 379
12. वही, पृष्ठ 500
13. वही, पृष्ठ 500
14. वही, पृष्ठ 500
15. वही, पृष्ठ 563
16. वही, पृष्ठ 581
17. वही, पृष्ठ 638
18. वही, पृष्ठ 720
19. वही, पृष्ठ 693
20. वही, पृष्ठ 708
21. वही, पृष्ठ 665
22. वही, पृष्ठ 708
23. वही, पृष्ठ 680
24. वही, पृष्ठ 723
25. वही, पृष्ठ 732
26. वही, पृष्ठ 757
27. वही, पृष्ठ 775